सागर की सौगातें

प्रभुदयाल मिश्र

एक सौ इक्कीस छात्रों (20 छात्राओं और 101 छात्र) की डिग्री कालेज टीकमगढ़ की बी.ए.की परीक्षा में अव्वल (अगले क्रम में आधी छात्राओं के बाद ही किसी छात्र का नाम था!) आने के बाद विश्वविद्यालय सागर में आगे की पढ़ाई का मन बन गया था। दो साल आगे सागर पहुंचकर अंग्रेजी में एम.ए.कर रही अरुण प्रभा (श्री कृष्ण कुमार, वर्तमान निदेशक एन. सी. आर. टी. की बड़ी बहिन) ने जैसे मेरे विषय–विभाग का भी माडल प्रस्तुत कर दिया था। रही यही कसर हार्डी के उपन्यास '. टेस' को पढ़कर पूरी हो गई।

इसी दौरान खबर आई कि टीकमगढ़ में इसी वर्ष (1966) से अंग्रेजी की स्नातकोत्तर कक्षाएं भी प्राचार्य डाक्टर राजेन्द्र वर्मा के प्रयास से आरंभ हो रही हैं। टी एस इलियट पर पी.एच.डी. डाक्टर वर्मा हमारे आभिजात्य अध्ययन और ज्ञान के आदर्श थे। मुझे लगा कि आगे की सलाह मुझे उन्हीं से लेनी चाहिए। कुछ–कुछ संकोच भी हो रहा था । किन्तु श्री वर्मा ने बड़ी उदारता/उदात्तता से कहा "एज माई फेवरिट स्टूडेन्ट आई विल लाईक यू टू रिमैन हेयर, बट यू.शुड हैव ए ब्रोडर फील्ड एण्ड विजन ...." (मैं अपने प्रिय छात्र के रूप में यद्यपि तुम्हें यहीं रखना चाहूंगा, किंतु आगे तुम्हे एक विस्तृत संसार मिले इस दृष्टि से तुम्हारा सागर जाना ही उचित है।)

अब तक बिना देखे बिना जाने अंग्रेजी विभाग के श्री एस.मल्लिकार्जुन यद्यपि मेरे आदर्श बन चुके थे, किन्तु इसमें पहुंचने के पहले मेरी संस्कृत के विभागाध्यक्ष श्री रामजी उपाध्याय और हिन्दी के श्री राजनाथ पाण्डे, श्री शिव कुमार मिश्र तथा श्री राम रतन भटनागर आदि से भेट हो चुकी थी। आचार्य नंद दुलारे जी बाजपेयी तब तक उज्जैन जा चुके थे। अतः उनके दर्शन की लालसा मुझे उस वर्ष की तुलसी जयंती तक साधकर रखनी पड़ी। यद्यपि तत्समय विषय के चयन का ऊहापोह मुझमे नहीं था, किन्तु इस प्रश्न का जैसे मैं आज भी शायद उत्तर न दे सकूं कि यदि हिन्दी एम.ए.में प्रवेश ले लिया होता हो क्या होता ?

संभव था कि विश्वविद्यालय की स्नातक परीक्षा मे दूसरे स्थान पर रह जाने की तुलना में पहला स्थान पा जाता, संभव था कि एक शिक्षाविद् या साहित्यकार के रूप में जाना जाता अथवा समालोचना (समाज की !) में रहकर अपने को पहचानने की चेष्टा करता, किन्तु अमेरिकन कवि रावर्ट फ्रास्ट चौराहे के जिस मोड़ पर खड़ा था, उधर न जाने का पछतावा करना अन्ततः बेमानी ही लगता है।

आज भी ऐसा लगता है (तत्समय तो यह अनुभव बहुत ही प्रगाढ़ था)कि चूंकि विश्वविद्यालय वास्तव में वैश्विक ज्ञान का केन्द्र हुआ, अतः इसमें अपने अध्ययन को एक विषय विशेष तक सीमित क्यों रखा जाना चाहिये! अतः चाहे हिन्दी के प्रेम शंकर अथवा गंगाधर हों, भूगोल के डॉ.अली, नेतृत्व विज्ञान के डॉ.श्यामाचरण दुबे अथवा भू–गर्भ विज्ञान के डॉ.डब्लयू.डी.वेस्ट हों, सभी को सुनने और समझने की ललक होती थी।

यूनिवर्सिटी के वार्षिक समारोह में मैं प्रदर्शनीय संस्कृत नाटक में संस्कृत विभाग की डॉ.वनमाला भवालकर ने मुझे बनवीर का अभिनय सौंपा। जब मैने अपने विभाग के एक दक्षिण भारतीय साथी से अपने रोल के संबंध में पूछा तो उसका कहना था –

''यू पर्फोम्ड वैल, बट योर स्वोर्ड डिड नाट गो डाउन फार किलिंग दी बेबी''

मैने उसे उत्तर दिया –

''आई होप्ड द कर्टेन टू फाल मच सूनर... ''

वर्ष 1968 की गर्मियों में परीक्षा परिणाम के पर्दे हटने का इन्तजार करते हुये मुझे अपने गांव के पते पर श्री मल्लिकार्जुनन का अंग्रेजी में टाईप्ड पोस्ट कार्ड मिला । उन्होने लिखा था कि उस वर्ष मेरा परीक्षा परिणाम सराहनीय था क्योंकि अंतिम वर्ष की परीक्षा में मेरा स्कोर सर्वाधिक था। श्री माल्लिकार्जुनन के निर्देशन में मेरा पी.एच.डी के लिए पंजीयन भी हुआ किन्तु उनका परामर्श मुझे यही मिला– जीवन में आदर्श कल्पनाशीलता विचार के क्षेत्र में अच्छी है, किन्तु व्यवहार के धरातल पर ऐसे लोगों के परिवार प्रायः पीड़ित ही होते है। अतः पहले नौकरी कर लो। शोध तो बाद में भी कर सकते हो।

अंग्रेजी विभाग में इन्हीं दिनों एक अंग्रेज व्याख्याता राबर्ट माईकेल हावर्थ आये। उनसे मेरी मैत्री बहुत प्रगाढ़ होती गई। जब उन्हें ऋषिकेश में महर्षि महेश योगी के यहां मेरा संपर्क सूत्र ज्ञात हुआ तो वे ऋषिकेश चलने को तुरंत तैयार हो गये क्योंकि उन्हीं दिनों बीटिल्स भी वहां पहुंचे हुये थे। हमारे तीसरे सहयात्री बने श्री सईद अली जो कि अंग्रेजी विभाग में नये नये व्याख्याता के रूप में आये थे। ये दोनों लोग मेरे साथ करीब सात दिन ऋषिकेश रह कर लौट आये, किन्तु मुझे महर्षि महेश योगी से मिल कर ही लौटने का ही परामर्श दिया ।

जाहिर था कि अब अमेरिकन नाटककार ''टेनेसी विलियम्स'' के नाटकों पर मेरे शौध कार्य में बाधा आ गयी थी। ''आदर्श कल्पनाशीलता'' के अतिक्रमण में मैने अपने विभागीय प्रतिनिधि मंडल के नेतृत्वकर्ता के रूप में दिल्ली में तत्कालीन प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी से यह आश्वासन मांगा था कि इतनी मेहनत से पढ़ने वाले छात्रों को वे काम का स्पष्ट आश्वासन दे, किन्तु भविष्य की लिखावट किसी विश्वविद्यालय में कहां पढ़ाई जाती है!

तथापि टैगोर छात्रावास, ढाने की ओर घूमती एकांत सड़कें अथवा शहर की ओर की पहाड़ी की ढलान कितनी चेतन – अवचेतन जीवन–श्रृंखलाओं का कथ्य बनेगी, कहना जैसे मुझे सदा मुश्किल ही रहेगा।

ई एन 1/15 चार इमली, भोपाल

ग्रहस्थ साधु श्री गंगाराम जी शास्त्री

प्रभुदयाल मिश्र

एम.पी.नगर के भीड, भरे व्यापार जगत में तपती गैरेज में टाईप राइटर पर दर्शन के रहस्य उघारते श्री गंगाराम जी शास्त्री को देखकर मैं अक्सर यह चौपाई दोहराता हूं –

'नंदिग्राम कर पर्ण कुटीरा'

जिसके विषय में श्री प्रभुदयालु जी अग्निहोत्री ने अनेक अवसरों पर यही कहा हो कि वे भोपाल में सर्वश्रेष्ठ संस्कृतज्ञ हैं तथा जिनके 'ताण्डव' और 'सप्तसती' रहस्यों के पारायण पूरे करने की क्षमता अपने आपमें लगातार खोजनी पड़ रही हो, उनके व्यक्तित्व की गरिमा की थाह मैं सचमुच नहीं पा सकता। किन्तु चूंकि श्री शास्त्री जी से मिलना, शास्त्रीय संदर्भ प्राप्त करना और उनके साथ रहना जिस प्रकार प्रीतिकर है, वैसा ही संतोष उनके सम्बन्ध में कुछ लिखकर मिलेगा, इस ललक से यह अलेख मैं लिख रहा हूं।

श्री शास्त्री जी को सबसे पहले मैंने थियोसीफीकल सेसाइटी भोपाल में सुना। श्री शशिदत्त शुक्ल की अध्यक्षता में तत्समय सक्रिय यह संगठन प्रति रविवार उनके गूढ़ अध्यात्मिक विषयों पर व्याख्यान कराता था। श्री शास्त्री जी गहन विषयों को जितने ऊंचे बौद्धिक धरातल से सुलझाते थे, भक्ति और भाव की भूमिका में आकर वैसे ही भावापन्न हो जाते । यहां तक कि उनका कण्ठावरुद्ध हो जाता था। मुझे लगता रहा है कि यह निर्णय कठिन ही होगा कि उनके ज्ञान की गरिमा उनकी भाव विहृवलता को क्यों अतिक्रमित नहीं करती, किन्तु संभवतः उनके कथ्य, अनुभव और प्रतीति की प्रामाणिकता में उनकी यह स्थिति एक स्वतः का वक्तव्य ही तो है।

जिस तरह श्री शास्त्री जी ने 'ताण्डव रहस्य' के विविध आयामों का संपर्श्य करते हुए इसके दर्शनिक, तांत्रिक, साहित्यिक, संगीत, नृत्य, रस, अलंकार, भाषा शास्त्रीय आदि पक्षों का संदर्भ लिया है, इसी प्रकार उनके व्यक्तित्व के भी अनेकानेक आयाम हैं। वे बुन्देली, बुन्देलखण्ड के क्षेत्रीय बाग्वैभव और आंचलिक साहित्यिक के कुशल चितेरे हैं। दतिया जिले की देवोपम प्राकृतिक छटा के क्षेत्र सनकेश्वर का यदि वे काव्यगान करते हैं तो उन्होंने विविध अध्यात्मिक साधनाओं और साधना केन्द्रों तथा तपस्थलियों में महीनों बिताकर अनेक अलौकिक साधनाओं के रहस्यों को ज्ञात किया है।

योग, ज्योतिष, आयुर्वेद, अनुष्ठान और अनेक अज्ञात साधनायें तो उनका व्यसन हैं ही, व्यंग्य और हास्य आदि की विधायें भी उनके साहित्यिक समाहार की कड़ी हैं। एक व्यक्ति में इतनी विविधताओं को संगम का एक दूसरा उदाहरण मेरी दृष्टि में बाबा रामप्रिय दास जी का ही है। अतः मैं इसे कोई महज संयोग नहीं कहूंगा कि बाबा ने समाधि लेने के चार दिन पूर्व अपनी पुस्तक 'विनय वाटिका' के लोकार्पण के अवसर पर शास़्त्री जी को विशेष वक्ता के रूप में आमंत्रित किया था।

शास़्त्री जी की शास्त्र की व्याख्या में प्रयुक्त दृष्टि सर्वथा मौलिक और प्रबोधनकारी है। अभी कुछ दिन पूर्व भोपाल की गीता समिति के साप्ताहिक कार्यक्रम में

उन्होंने गीता के 15 वें अध्याय के पहले श्लोक की अभिनव व्याख्या प्रस्तुत की। श्री कृष्ण जब इस अध्याय के आरंभ में संसार को ऊपर की ओर की जड़ों वाला जीवन का वृक्ष बताते है तो इस कथन को आसानी से आत्मसात् करना कठिन हो जाता है। शास्त्री जी का कहना था कि यहां एक संकेत मनुष्य की देह की ओर भी किया गया है। मनुष्य का पोषणकारी मूल उसका शीर्ष और मुख ऊपर ही तो स्थित है। वह अपनी भुजा आदि की शाखाओं का वस्तुतः इसी से पोषण प्राप्त करता है।

यह अच्छा है कि शास्त्री जी ने लेखन के साथ ही साथ अपना एक स्वतंत्र 'आदित्य प्रकाशन' भी खोला हुआ है। लेखन, विशेषकर संस्कृत लेखन और मुद्रण की शुद्धता अपने आपमें बड़ा चुनौती भरा काम है। यह कोई आश्चर्य नहीं कि डॉ.रामकृष्ण सराफ अपनी पुस्तक का प्रकाशन शास्त्री जी के इस प्रकाशन को सौपकर पूरी तरह से आश्वस्त हो सके होंगे।

मुझे स्मरण है कि मैं शास्त्री जी का एक काम नहीं कर सका हूं। शास्त्री जी की इच्छा थी कि उनकी पुस्तक 'तांडव रहस्य' का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो। इस कार्य के लिए मुझे जहां समय एक समस्या थी, वहीं इस रचना की दुर्जेय सामासिक आलंकारिता को अंग्रजी में उताराना मुझे दुस्साध्य ही लगता रहा है। यह प्रश्न भी रहा कि इस स्तोत्र की व्याख्या में इतने संदर्भ और इतने सूत्र पश्चिम के मन मस्तिष्क में कैसे समा सकेंगे!

अब तो जमाना कम्प्युटर और इन्टरनेट का आ गया है। शास्त्री जी की टाइपराइटर के नोट की पकड़ बहुत पुरानी है। मेरी तो उन्हे यही सलाह है कि वे एक कम्प्युटर ले लें और एक अपनी बेवसाईट बनाकर अपनी इन बहुमूल्य कृतियों को उसमें डालदें । आगे कभी तो, कोई तो इनका मूल्य ज्ञात कर विश्व मानवता के कल्याण के लिए इनका उपयोग करेगा।

श्री शास्त्री जी की शतायु कामना सहित।

(पी.डी.मिश्र)
ई.एन./15 चार इमली
भोपाल

भारतीय प्रज्ञा के जाज्वल्यमान प्रतिनिधिः
पंडित राम विलास जी हुण्डैत

– प्रभुदयाल मिश्र

ग्यारह वर्ष की उम्र से लेकर आज (लगभग 50 वर्ष बाद) तक जिनके व्यक्तित्व ने मेरे ऊपर अमिट प्रभाव छोड़ा उन श्री राम विलास हुण्डैत (दिवंगत) का स्मरण करना मेरा धर्म कर्तव्य तो है ही भारतीय मनीषा के एक जाज्वल्यमान प्रतिनिधि के प्रति अगाध श्रद्धांजलि भी है। कभी कभी मैं सोचता हूं कि यदि श्री हुण्डैत जी को मैंने इतनी अल्पवय में न जाना होता अथवा उसके बाद संयोगतः उनसे लगातर मिलने का अवसर न मिला होता तो संभवतः मैं कुछ भिन्न ही हुआ होता। यह भी कैसा विस्मय नहीं है कि उन्होंने गुरुवत मुझे ''दीक्षित'' किया किन्तु वे अन्त तक मेरे बखान को बड़े प्रशंसा भाव से सुनकर मुझे प्रोत्साहित ही करते रहे।

बचपन में मुझे ऐसी बहुत सी किताबें पढ़ने को मिल गईं थी जिनमें जप, तप, स्वाध्याय, अनुष्ठान, ब्रह्मचर्य और साधना की सिद्धियों के वर्णन भरे पड़े थे। अपने आस–पास देखते हुए मुझे कोई ऐसा व्यक्ति समझ नहीं आता था जिसके जीवन में कहीं इन वर्णनों की प्रतिच्छाया दिखाई पड़ती हो। अकस्मात् एक दिन चूड़ेदार पायजामे में गठीले वदन के श्री हुण्डैत जी को सम्मानपूर्वक अपने घर में बैठा पाकर मैं उनकी ओर आकर्षित हुआ। मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा था कि जो कुछ मैंने पढ़ा था उसे उन्होंने अपने जीवन और अपनी दिनचर्या में ढाल लिया था साथ ही जाते–जाते उन्होंने मुझे एक आश्वासन तथा मेरे परिवारजनों के लिए यह भविष्यवाणी की कि वे मुझे सनातन भारतीय जीवन दर्शन के अध्येता और आदर्श के रूप में देखेंगे।

उन दिनों जब कहीं जाने के लिए वर्षों विचार कर महीनों के लिए दूर चला जाना पड़ता था, जब छोटे घरों में रहते हुए बहुत लोगों को घर के बाहर चबूतरे, नदी, तालाब के घाट या खेत के मैदानों में फैला रहना पड़ता था, तब बहुत पढ़ने, लिखने, समझने या बूझने के लिए केवल धूप–छांव, तेज–हल्के हवा के झौंके या उजियारा–अंधेरा तारों से भरा आसमान ही होता था। ऐसे में यदि किसी एक के पास हस्तलिखित या छपी कोई पोथी हो, वह उसे पढ़ लेता हो और उसमें बताए रास्ते वह एकान्त में जाकर रात–रात भर पुरश्चरण करने लगे तो उसके सिद्धत्व में संदेह नहीं होना चाहिए। श्री हुण्डैत जी का आरांभिक रेखा चित्र कुछ इसी तरह का बनता है।

बाद में जाकर मुझे यह अनुभव होता गया कि श्री हुण्डैत जी अपने आपको सिद्ध के स्थान पर साधक और शोधार्थी ठहराना ही अधिक पसंद करते हैं। वे ज्ञान विज्ञान की नूतन दिशाओं की ओर अपने अनुभूत सत्य के टेलिस्कोप से देखने लगते थे। या यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि वे वर्तमान वैज्ञानिक दृष्टि से भारतीय ज्ञान भंडार की ओर झांकना चाहते थे ताकि हमारे अक्षय कोष में से हम आखिर कुछ तो समेट सकें।

एक बार मैंने उन्हें 1 जनवरी को नए वर्ष का अभिनन्तदन पत्र क्या भेजा, उन्होंने सात पृष्ठीय पत्र में काल, संवत्सर और सृष्टि के विकास क्रम का अद्भुत लेखा भेज दिया। वे अक्सर वेदान्त और विशेषकर उपनिषिदों के अध्ययन में निरत रहते थे। अपने मैत्रेयी–औपनिषदिक उपन्यास लेखन में मैने उनसे प्रेरणा ली थी। (हालांकि इसे पढ़कर उन्होने मुझसे यही कहा कि इसको पढ़ने के बाद वे वृहदारण्दक उपनिषद् को एकबार पुनः आद्योपान्त पढ़कर उसमें नए अर्थ देख रहे हैं)

महामृत्युज्य मंत्र के सम्बन्ध में एकबार उनसे चर्चा होने पर उन्होंने मेरी अनेक वद्धमूल शंकाओं का निवारण किया। उदाहरण के लिये यह प्रश्न सदा से मेरे मन में उठता था कि यदि इस मंत्र के द्वारा हमें पकी ककड़ी की तरह अपने मूल से अलग होने वाली आसान मृत्यु का वरण करना है तो इस मंत्र का दीर्घजीविता के लिए अनुष्ठानात्मक प्रयोग क्यों प्रचलित है ? इसमें मृत्यु से मुक्ति और अमृत में प्रतिष्ठा का यदि दूसरा भाव लिया जाता है तो सहज मृत्यु की प्रार्थना ही निरर्थक प्रतीत होती है। तीसरी स्पष्ट शंका यही उत्पन्न होती थी कि वैदिक ऋषि किस बन्धन से मुक्ति की प्रार्थना कर रहा है – बन्धन जीवन है या मृत्यु ?

श्री हुण्डैत जी का कहना था कि वैदिक ऋषि की दृष्टि कहीं भी एकांगी नहीं है। वह मनुष्य के किसी एक जन्म विशेष की सफलता अथवा सुख तक सीमित नहीं की जा सकती। भारतीय दर्शन में जन्म और मृत्यु जिस जीवन श्रंखला का निर्माण करते है वैदिक ऋषि वस्तुतः उसके बन्धन से मुक्ति की कामना कर रहा है। वास्तविक बन्धन मृत्यु न होकर जीवन और मृत्यु की वह 'श्रंखला' है जो मोक्ष अर्थात् अमृतत्व में प्रतिष्ठित नहीं होने देती। ईशवास्योपनिषद् में इसी सिद्धान्त की जैसे पुष्टि करते हुए कहा गया है–'अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते' अर्थात् अविद्या के द्वारा मृत्यु के परे जाकर विद्या के द्वारा अमृतत्व में प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।

साधना के द्वारा सिद्धि की प्राप्ति का प्रमाण मुझे सर्वप्रथम श्री हुण्डैत जी के जीवन में ही देखने, सुनने और समझने को मिला। उनका कहना था कि उन्होने अपनी आरंभिक पुरश्चरण साधना के द्वारा वाचा–सिद्धि प्राप्त कर ली थी। इसके कारण उन्हें कुछ भी बोलते हुये बहुत सावधान रहना पड़ता था। बाद में उन्हें प्रचुर तीर्थाटन और अनेक चान्द्रायण व्रत किए। मुझे उनके एक शिष्य से भेंट करने तथा उसके ऐसे पत्र को देखने का अवसर मिला जिसमें उन्होंने अपने गुरु श्री हुण्डैत जी की कृपा से जीवन में अपने इष्ट की अभिप्राप्ति कर ली थी।

श्री हुण्डैत जी एक साहित्य सेवी परिवार के सदस्य थे। उनके अग्रज श्री कृष्णनन्द जी हुण्डैत ललितपुर के एक प्रतिष्ठित साहित्यकार और कवि थे। वर्ष 1990 में उन्होंने इस कस्बे में बुन्देलखण्ड साहित्य परिषद के तत्वाधान में एक विराट ऐतिहासिक, पुरातत्विक और साहित्यिक शोध समारोह आयोजित किया था। किन्तु जैसी कि उनके जीवन की केन्द्रीय ध्वनि थी ('मेरा मन्दिर दूर विजन में'), उन्होंने अपने आपको प्रचार और विज्ञापन से प्रायः दूर ही रखा।

श्री हुण्डैत जी से जुड़ा हुआ एक संस्मरण और मुझे याद आ रहा है। उन दिनों मैं महर्षि महेश योगी के साथ अखिल भारत यात्रा के क्रम में भोपाल पहुंचा था। श्री हुण्डैत जी भोपाल के रवीन्द्र भवन में आयोजित विशाल सभा में मंचस्थ महर्षि जी

के निकट ही बैठे थे। एक स्थान पर जब महर्षि जी एक वैदिक मंत्र को उद्धृत करने में अटकने को हुऐ तो श्री हुण्डैत जी ने उसे अपने उच्च स्वर से पूरी शुद्धता से सुना दिया। इससे संपूर्ण सभा का उनकी ओर ध्यान सहज ही में आकृष्ट हो गया।

संसार में जो है उसकी कितनी समस्यायें नहीं होतीं–पारिवारिक, शारीरिक और सामाजिक, किन्तु इनमें रहकर यदि कोई इनसे निर्लिप्त रह सके, तो उसी को तो संसार से परे, मुक्त कहा जायेगा। स्वभाविक रूप से श्री हुण्डैत जी के जीवन में भी ऐसी अनेक समस्यायें रही हैं, रही होंगी, किन्तु मैने उन्हें जल में कमल पत्र की भांति 'पद्मपत्रेणमिवाम्भसा' ही देखा। उनकी स्मृति को मैं अपने जीवनानुभव की एक सम्पदा के रूप में संजो कर रखना चाहता हूं।

ई.एन.1/15 चार ईमली
भोपाल (म.प्र.)

संस्मरण

भारत जो अमेरिका में है ।

प्रभुदयाल मिश्र,

अटलांटिक महासागर के ऊपर से करीब सात घंटे की उड़ान के बाद जब पेरिस से उड़ा हमारा यान न्यूयार्क अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर उतरा तो बाहर कार में बैठते हुए मैने अपने बेटे को सुन्दरकाण्ड की ये पंक्तियॉ सुनाईं –

अति उतंग जलनिधि चहुं पासा
कनक कोटि कर परम प्रकासा
कनक कोटि विचित्र मणिकृत सुन्दरायतना धना
चौहट्ट हट्ट सुघट्ट बीथी चारुपुर बहुविधि बना ।

यह हनुमान की लंका में पड़ी दृष्टि का लेखा है । एक पूरे छंद में इसका काफी बडा विस्तार है । इन पंक्तियों के आगे भी मुझे अमरीकी जीवन और जगत में इससे अनेक समानताऐं दिखीं किन्तु मै अमेरिका में लंका नहीं भारत को देखकर लौटा हॅू अतः यहां उसी का वर्णन मुझे अभीष्ट है ।

एक भारतीय को अमेरिका पहॅुचकर जो अनुभव अक्सर दुहराने में आता है वह संभवतः यही है कि प्रत्येक पर्यटन स्थल, नगर और सडक पर चलते फिरते भीड में कम से कम 10

प्रतिशत भारतीय मिल ही जाते हैं । इन दिनों भारतीय युवा कम्प्यूटर इंजीनियरों की भीड़ कुछ ज्यादा बढ़ गई है उसके रिश्ते भी इनके साथ दादा दादी और नाना नानी इसे बढ़ाने में लग गए हैं । एक बार सुख समृद्धि और स्वच्छता की इस भूमि में भारतीय पहुॅचा तो फिर ग्रीन कार्ड प्राप्त कर वहॉ की सामाजिक सुरक्षा का लाभ प्राप्त करने की सोचने ही लगता है ।

इतने भारतीय अमेरिका में क्या कर रहे है ! वे औसतन तौर पर तो अमरीकियों जैसा व्यवहार करते ही प्रतीत होते है । मसलन सडक पर चलते हुए आपको रोककर बोलना चाहेंगे, किन्तु बोलेंगे नहीं । हिन्दी में बोलना चाहेंगे किन्तु शुरूआत अंग्रेजी में करेंगे । घर में पूजा पाठ करेंगे किन्तु बाहर अमरीकी पोषाक ही उन्हें रास आती है । किन्तु प्रवासी भारतीयों की भारतीयता उनके घरों में पहुॅचकर उनके साथ कुछ समय बिताकर ही ठीक से समझी जा सकती है ।

न्यूजर्सी के कुछ भाग तो भारतीय बहूल ही हैं । इनमें से गुजराती परिवार अपनी ..... पहचान बना लेने में सबसे आगे हैं । अपना बजार, पटेल मार्केट तथा बम्बई, ताजमहल आदि रेस्तराओं में तो केवल भारतीय दिखेंगे ही, अतः 'शिव भंडार' में भारतीय दुर्लभ व्यंजनों –पूजा की अगरबत्ती, धूप दीप खरीदने की होड़ आश्चर्यजनक नही है । किन्तु मुझे अपनी रुचि की भारतीय किस्म का संसार अन्ततः बोस्टन के प्रथम पडाव में मिला ।

श्री योगेश मिश्र (मूलतः भेपाल से) एक बहुराष्ट्रीय कम्पनी के पदाधिकारी हैं । उनसे सम्पर्क होने पर जब उन्होने बार बार अपने दो छोटे छोटे बच्चों के मेरी प्रतीक्षारत होने बात कही तो शुरू में मैने इस पर बहुत विश्वास नहीं किया । अक्सर अमरीकी स्कूलों और संस्कृति में पले बढ़े बच्चे किसी के भारत से इस प्रकार अकस्मात आ जाने पर उसका क्यों इंतजार करेंगे ? भारतीय परंपरा दिवस समारोह में भारत की पृष्ठभूमि पर एक अंग्रेजी नाटक में उनका अभिनय देखकर भी मुझे अपना मूल विश्वास ही दृढ होता लगा । किन्तु जब वहां पहुॅचकर 10 साल के राधव तथा सात साल के अभिनव ने अपने पूजा स्थल पर ढोलक और हारमोनियम साथ साथ बजाकर आरती गाई और इसके बाद अपने माता पिता के साथ साथ मेहमानों के चरण छुए तो मुझे लगा कि यहॉ तो बात ही कुछ और है ।

22 जून को बोस्टन में प्रतिवर्ष भारतीय परंपरा दिवस समारोह आयोजित किया जाता है । इसके अतिरिक्त यहॉ 15 अगस्त को भारतीय स्वतंत्रता दिवस मनाए जाने की भी परंपरा चल रही है । अमेरिका में सभी दिशाओं से भारतीयता समेटे इतने भारतीय इकट्ठे देखना एक सुखद अनुभव है । एक साथ वेद की ऋचाओं का शुद्ध पाठ, शास्त्रीय संगीत और नृत्य के साथ नाटक और नए फिल्मी गाने सुनना 12 हजार मील की दूरी को जैसे क्षणभर में पाट रहा था ।

भारतीय परंपरा दिवस के आयोजन के पश्चात एक अन्य कार्यक्रम में मुझे 'वेदों में राष्ट्रीयता' विषय पर बोलने और चर्चा करने का विशेष अवसर मिला । इसमें मुख्य विचार का प्रश्न यही रहा कि वेदों में बार बार उल्लेखित राष्ट्र तत्कालीन भारत की भौगोलिक इकाई है अथवा कुछ और है ? इस सम्बन्ध में मेरे द्वारा प्रकट निष्कर्ष यही था कि वेदों का राष्ट्रवाद किसी भौगोलिक इकाई तक सीमित नहीं है । जिन ऋषियों के सोच की धरती सभी मनुष्यों को एक घर और संपूर्ण मानवता के बन्धु बान्धवों की परिधि में लाती हो, उसका दृष्टिकोण सीमित नहीं हो सकता । इस अवसर पर मैने अथर्ववेद के पृथिवी सूक्त की ऋचा का यह काव्यानुवाद भी सुनाया

विविध धर्मी
विविध भाषा
विविध भूतल

मानवों का
एक तुम ही पर अटल
हो गाय कपिला
सरल सीधी
हमारे हित सहस धारा
दुग्ध धन की
बनो पृथिवी

वाशिंगटन में एक अन्य भारतीय परिवार में अनुभव कुछ और भी रोचक रहा । इस परिवार के 11, 8 और 6 वर्ष के तीन बच्चे एक नाटक 'विभीषण गीता' नाट्य प्रस्तुति की तैयारी कर रहे थे । मैने कठिनाई से हिन्दी बोल पाने इन बच्चों से जब पूछा कि वे विभीषण गीता का संदर्भ और आशय जानते है तो उन्होने मुझे रामचरित मानस का पूरा प्रसंग कंठस्थ सुनाया–

रावण रथी विरथ रघुवीरा ....

मै समझ गया कि चिन्मय मिशन वाशिंगटन में पर्याप्त तौर पर सक्रिय है । आश्चर्यजनक रूप से इन बच्चों में से एक ने शास्त्रीय गायन, एक ने तबला वादन तथा सबसे छोटी बालिका ने कत्थक नृत्य का मनोहारी प्रदर्शन किया जिसे मैने अपने विडियो में संजोकर रखा है ।

अटलांटिक सिटी के आठ मील चौडे समुद्र तल पर धूमते हुए डाक्टर नरेश शर्मा मुझे बताते है कि अमेरिका की मायन सभ्यता भारतीय वास्तुकार मय से निकट संबंध रखती होगी । यह हमारे विचार और विश्लेषण कर एक बडा रहस्य बिन्दु है कि कुछ सौ वर्षो पूर्व नवनिर्मित यह राष्ट्र अपने सारे अतीत को मेटकर कैसे यकायक उठ खडा हो गया है । जैसे यहॉ की सडके, ऊचें प्रासाद, और सुरम्य वाटिकायें माया लोक की ही सृष्टियॉ है । 'ऐग हारबर टाउनशिप' के काफी बडे क्षेत्रफल में निर्माणाधीन अपने मकान के वास्तुपूजन की फिल्म डॉ0 शर्मा हम लोगो को बडे मनोयोग से दिखाते हैं । पूरे कर्मकाण्ड और विधि विधान से उनके गुरुजी द्वारा सम्पादित पूजन की विधि और पाठ की शुद्धता मुझे प्रभावित करती है ।

भोपाल के एक नूरस्सबा का जिक्र अन्य शहरों में हम कभी कभी बड़े गर्व से करना चाहते हैं । पर पता नहीं भोपाल के युवा इंजीनियरों ने अटलांटिक के किनारे कितने नूरस्सवाह नहीं बना लिए हैं । समुद्र की बालू पर खडी की गई हरियाली और पर्यटन के परिपूर्ण आकर्षण इनकी शोभा में चार चांद भी लगाते हैं ।

न्यूजर्सी के आसपास श्री सत्यसाईबाबा के भजन केन्द्रों की इंटरनेट पर खोज करते हुए मुझे पहली बार ख्याल में आया कि अकेले अमेरिका में शेष सारी दुनिया के ही बराबर केन्द्र स्थित है । न्यूजर्सी के वेद मन्दिर में संचालित इस केन्द्र में उस दिन बच्चों द्वारा गाए गए भजन सुनकर मै प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका । भजन के पूर्व यजुर्वेद का शुद्ध पाठ साधकों के गहन अभ्यास और समर्पण साधना का द्योतक था । मुझे याद आया कि यह मंदिर बैगलोर के ब्रम्हलीन स्वामी गंगेश्वारानंद ने वेदों के संपूर्ण विश्व में प्रचार के अभियान की लंबी श्रंखला में बनाया है । उनका संस्कृत संस्थान विद्वानों को वेदरत्न पुरस्कार भी प्रदान करता है ।

दक्षिण भारतीय शैली में बालाजी वेंकटेश्वर प्रधान देवता के मंदिर यहां बहुलता से देखने को मिलते है । पेनसिलवेनियॉ राज्य में निर्माणाधीन ऐसे मंदिर में क्षण प्रतिक्षण हो रही आरती में डालरों की दक्षिणा चमकृत कर देती है । ऐसे मौके पर जब हमारी श्रीमती जी ने 20 डालर अर्पित कर दिये तो मैने उन्हे भारतीय मुद्रा में उनकी कीमत याद दिलाई किन्तु वे विचलित नहीं थी क्योकि उन्हे भी यह मुद्रा योगेश की पत्नी से अन्ततः भेट में ही प्राप्त हुई थी ।

न्यूयार्क में स्टेच्यू ऑफ लिबर्टी के पास मैनहट्टन क्षेत्र में सामने स्टारबक स्वल्पाहार गृह में मेरा बेटा 'चाय' माँगता है । तत्काल संपूर्ण दूध और शक्कर की हर्बल चाय हमें प्राप्त होती है । स्टारबक स्वल्पाहार गृहों की यह श्रृंखला लगातार बढ़ती जा रही है । जड़ी बूटियों वाली चाय पहले संभवतः भारत से आयातित होती थी किन्तु अब बड़े पैमाने पर वहाँ उगाई जाने लगी है ।

हम यहाँ भी अखबारों में इन दिनों पढ़ते है कि शब्दकोष, गणित और सामान्य ज्ञान में भारतीय मूल के बालक अमेरीकियों को लगातार पछाड़ रहे है । वहाँ रह रहे भारतीययों की चिन्ता अपने बच्चों को भारतीय जड़ों से कट जाने की बनी रहती है । अतः वे भारतीय कर्मकाण्ड, भारतीय पूजा और परंपराओं का खूब बढ़ा चढ़ा कर प्रयोग कर रहे है । वे यह भी चाहते है कि भारत में ऐसा नेतृत्व काम करे जिसका आदर्श वे विदेशियों की भूमि में प्रस्तुत कर गौरवान्वित हो सकते हों । सात समुन्दर पार बस रहे इन भारतीयों के छाया– भारत से मूल भारत घटतर न हो जाये, क्या इसकी चिन्ता हमें नहीं करनी चाहिये ?

अनेक अमरीकी विद्धान भी भारत को अपने हृदय में बसाए हैं । इनमें डेविड फ्राली जैसे वेदज्ञ उल्लेखनीय है जो मानते है कि उनका पूर्वजन्म भारत में हुआ था । इस प्रकार उन्होने अपना नाम ही बदलकर वामदेव शास्त्री रख लिया है । मेरा शास्त्री जी से ईमेल सम्पर्क भी है तथा विश्वास है कि वेदो के शोध और उनकी पुनर्प्रतिष्ठा में हमारा सहयोग प्रगाढ़तर होगा ।